डाक पंजीयन संख्या - श्रीगंगानगर/105/2009-2011
आर. एन. आई - राजहिन/2003/9899
प्रकाशन दिनांक 1 अप्रैल 2010 मूल्य - पाँच रुपये

अजायब बानी

{गुरु महिमा}

वर्ष - सातवां | अंक-बारहवां | अप्रैल-2010 | मासिक पत्रिका

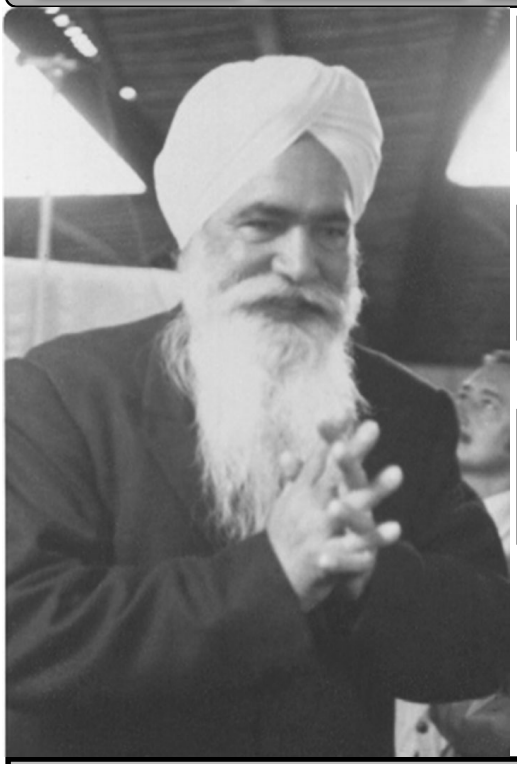

5
एकाग्रता

9
रूहानियत

27
सभी सन्त एक होते हैं

32
प्रेम-विरह

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक, मुद्रक व सम्पादक : प्रेम प्रकाश छाबड़ा ने प्रिन्ट टुडे श्री गंगानगर से छपवाकर 1027 अग्रसेन नगर, श्री गंगानगर -335 001 (राजस्थान) से प्रकाशित किया ।
फोन - 09950 55 66 71 (राजस्थान) व 09871 50 19 99 (दिल्ली)
विशेष सलाहकार : गुरमेल सिंह नौरिया फोन-09928 92 53 04, 09667 23 33 04
उप सम्पादिका : नंदिनी **सहयोग :** रेनू सचदेवा, ज्योति सरदाना व परमजीत सिंह

सन्त बानी आश्रम
16 पी.एस. रायसिंहनगर - 335 039 जिला - श्री गंगानगर (राजस्थान)

e-mail : dhanajaibs@yahoo.co.in | 97 | Website : www.ajaibbani.org

सावन शाह जी आओ

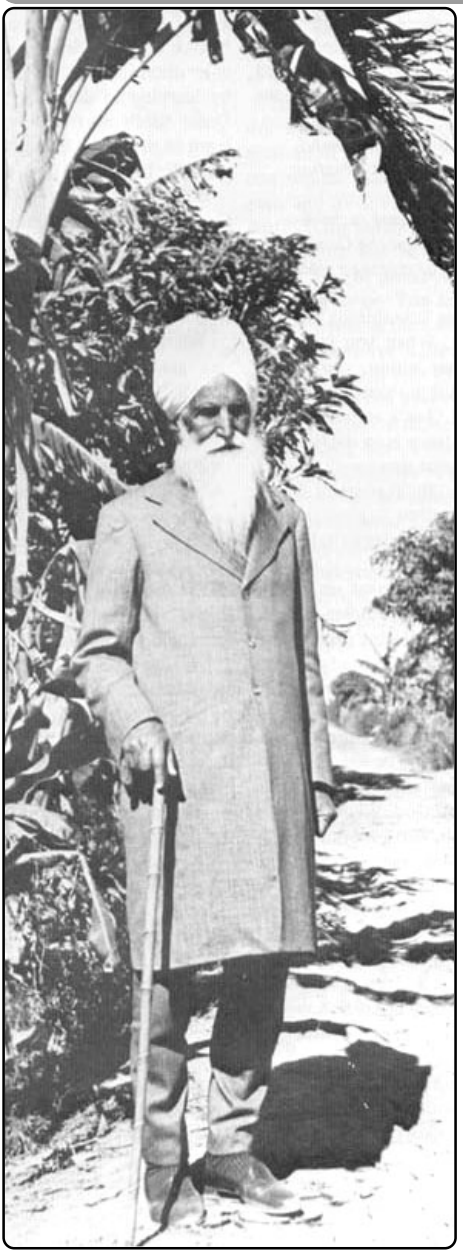

सावन शाह जी आओ, दर्श दिखाओ,
कई जन्मा दे, रोग मिटाओ, (2)

दर्श बिना सानूं, चैन ना आवे,
एक-एक पल, युग बीतदा जावे, (2)
काल दी नगरी चों, आन बचाओ,
कई जन्मा दे, रोग मिटाओ,
सावन शाह .....

मैं गुनाहगार तूं, बक्शनहारा,
समझो यतीम आ, देवो सहारा, (2)
बेड़ी मझधार चों, पार लगाओ,
कई जन्मा दे, रोग मिटाओ,
सावन शाह .....

डाकू लुटेरे, फिरन चुफेरे,
दया करो दाता, जीव हां तेरे, (2)
काल दे पंजे चों, आन छुड़ाओ,
कई जन्मा दे, रोग मिटाओ,
सावन शाह .....

गरीब अजायब दी, सुन अरजोई,
तेरे बिना किते, मिलदी ना ढोई, (2)
सावन शाह जी आओ, देर ना लगाओ,
कई जन्मा दे, रोग मिटाओ,
सावन शाह .....

महाराज सावन सिंह जी द्वारा एक प्रेमी के पत्र का जवाब

एकाग्रता

4 अक्टूबर 1931

प्यारे बेटे हारवे मेयर्स

मुझे आपके 18 अप्रैल और 13 जुलाई के दोनों पत्र समयानुसार मिले। बाद वाला पत्र आपने 'नामदान' के बाद लिखा है। मैंने पिछले पत्र में आपको **एकाग्रता** के बारे में कुछ संकेत दिए थे। जिससे यह आशा कर सकता हूँ कि अभ्यास करने से आप अपनी दिक्कतों की साफ तस्वीर देख सकेंगे।

आसन में बैठना आपके लिए आसान नहीं है क्योंकि आपको कुर्सी पर बैठने की आदत है। आप कभी-कभी अचेत होंगे और अपनी माँसपेशियों से नियंत्रण खो जाते होंगे, उस समय अगर आपका सिर पीछे या दाँई-बाँई तरफ गिरे तो आप एक झटके से उठ खड़े हों।

जब हम साधारण तरीके से सोते हैं तब हमारा ध्यान हमारी आँखों के बीच आ जाता है तो हम अपनी माँसपेशियों से नियंत्रण खो देते हैं। उस समय शरीर अचेत हो जाता है। चेतना खोने का मतलब है कि ध्यान आँखों के केन्द्रबिन्दु पर टिका नहीं और नीचे की तरफ गिर जाता है। गले के बीच अर्धचेतना की स्थिति होती है जिस कारण सपने आते हैं। नाभि के बीच चेतना पूरी तरह से खो जाती है अगर चेतना आँखों के केन्द्र बिन्दु पर रहती तो नीचे गिरने की जगह ऊपर जाती और वहाँ और ज्यादा अनुभव करती।

चेतना के खोने का मतलब है साधारण नींद। जब तक ध्यान आँखों के बीच केन्द्र बिन्दु पर है तब तक अचेतना आ ही नहीं सकती। जब आप कहते हैं कि आप झटके से उठे तो इसका मतलब यह है कि आप सो रहे थे। ध्यान की आदत नीचे गिरने की होती है हमने इसी आदत को काबू करना है।

यही से संघर्ष शुरू होता है, ध्यान नीचे जाता है और हम ऊपर जाने की इच्छा करते हैं। जब आपको झटका आता है तो आप फिर से अभ्यास शुरू करें चेतना के साथ केन्द्र बिन्दु पर टिके रहें। जब आपको केन्द्र बिन्दु की होश होगी तब आप बार-बार अपने ध्यान को उस बिन्दु पर एकाग्र करेंगे तो ध्यान ऊपर जाएगा तब आप धीरे-धीरे शरीर से अचेत हो जाएंगे और आपको सिर्फ केन्द्र बिन्दु की होश रहेगी कि उसके अंदर क्या है?

यह धीमी गति वाला कार्य है। इसमें समय लगता है लेकिन यह निश्चित है कि जल्दी या देर से आप अवश्य सफल होंगे। **एकाग्रता** पाने का संघर्ष वैसे ही है जैसे एक चींटी दीवार पर चढ़ती है, चींटी जब थोड़ा सा ऊपर चढ़ती है फिर गिर जाती है लेकिन जब उसे एक बार छत दिखाई दे जाती है तो वह हिम्मत नहीं हारती। आँखों के केन्द्र बिन्दु पर आना उसी तरह है जिस तरह चींटी संघर्ष करती है।

एकाग्रता की मंजिल आँखों के बीच केन्द्र बिन्दु पर है। इसकी किरणें सारे शरीर को उत्तेजित करती हैं। यह स्थूल शरीर के पार चली जाती हैं। इनका बहुत बड़ा फैलाव है जैसे बेटे-बेटियां, पत्नी, दूसरे रिश्तेदार, जायदाद और देश प्रेम में खो जाती हैं। इन किरणों को केन्द्र बिन्दु पर लाने में समय लगता है। वही इंसान है जो इन किरणों को आँखों के बीच में केन्द्रित कर लेता है नहीं तो वह एक पशु की तरह है।

जब ध्यान की किरणें केन्द्र बिन्दु में इकट्ठी होनी शुरू हो जाती हैं तो चुभन का अहसास होता है जोकि **एकाग्रता** का संकेत है। तब ऐसा लगता है जैसे हमारे शरीर पर चींटिया चल रही है। जब अंदर से किरणे बाहर आती हैं तब वह स्थिति अनिद्रा से बेहतर होती है।

आपको आसन में बैठने की आदत नहीं है लेकिन हम भारतीयों को यह आदत है। मोटे लोगों को आसन में बैठना मुश्किल लगता है। आसन ही अन्त तक पहुँचने का तरीका है।

रोशनी और आवाज हमेशा केन्द्र बिन्दु पर रहते हैं। ये केन्द्र बिन्दु से गैरहाजिर नहीं होते अगर इनका केन्द्र बिन्दु पर प्रवाह न हो तो हम जिन्दा नहीं रह सकते। अभी आपको कुछ दिखाई नहीं दिया तो परेशान न हों। आपको चिन्ता तब करनी चाहिए जब आप केन्द्र बिन्दु पर पहुँच जाएं और वहाँ कुछ न पाएं। सब कुछ केन्द्र बिन्दु के अंदर ही है। आप अपनी सोच का अंदाजा ही नहीं लगा सकते कि यह खजाना आपका है और आपके लिए ही है। आप जल्दबाजी न करें।

तसल्ली और निरंतर प्रयत्न से **एकाग्रता** का कोर्स पूरा करें। अंदर जाने में समय लगता है। अंदर से ऊपर की चढ़ाई आसान है, इस कोर्स का यह हिस्सा स्वादहीन है। स्वाद **एकाग्रता** से आता है। धीरे और स्थिर चलने वाला व्यक्ति ही जीतता है। संघर्ष के बाद जो मिलता है हमें उसकी कद्र होती है जो आसानी से मिल जाता है उसकी कद्र नहीं होती।

आत्मा की स्वाभाविक प्रवति ऊपर उठने की होती है क्योंकि यह किसी और देश का पक्षी है। मन और शरीर इसे नीचे की ओर रखते हैं। दूध पर अपने आप ही मलाई आ जाती है दूध को हिलाने से उस पर मलाई नहीं आती। जब मन और शरीर स्थिर हो जाते हैं तो आत्मा केन्द्र बिन्दु की तरफ उठना शुरू कर देती है।

जब ध्यान आँखों के बीच केन्द्र बिन्दु पर आ जाता है तब यह स्थूल रचना से ऊपर उठ जाता है और कुछ समय के लिए मुक्त हो जाता है फिर सहँसदल कवल में जाकर सूक्ष्म से भी ऊपर उठ जाता है और त्रिकुटी से ऊपर यह कारण से भी ऊपर उठ जाता है। जब तक आत्मा मन और शरीर के वश में है तब तक यह जन्म और मृत्यु के आधीन है। हर मौत के बाद आत्मा शरीर बदलती है क्योंकि आत्मा अविनाशी है, शरीर मरता है आत्मा नहीं मरती।

हमारे पिछले कर्म ही शरीर के बदलने को निर्धारित करते हैं। कोई शरीर बिना कर्म के नहीं है। जब तक सारे कर्म मिट नहीं जाते तब तक आत्मा मुक्त नहीं होती कर्मों के आधीन रहती है।

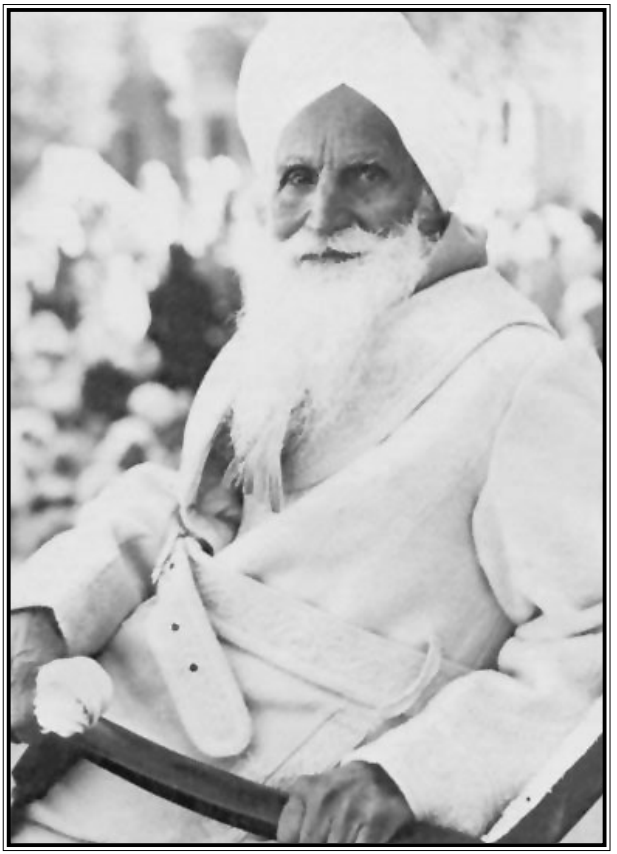

जन्म के समय आत्मा को कुछ कर्म और प्रभाव दिए जाते हैं जो एक तरह से साँचा बनाते हैं जिसमें नई जिंदगी ढ़लती है। ये जीवन की अवधि और जिस तरह के कार्य हम करेंगे उसे तय करते हैं।

सन्त कहते हैं कि आप जो अपनी किस्मत में लिखवाकर लाए हैं वे तो आपको भोगने ही हैं उनसे बचा नहीं जा सकता। आप जो नए क्रियमान कर्म करते हैं उन्हें सोचकर करें अगर आप गुरु के प्रतिनिधि बनकर कर्म करते हैं तो आप उसके जिम्मेवार नहीं होंगे। एक ईमानदार प्रतिनिधि कभी भी सम्पत्ति का गलत प्रयोग नहीं करेगा।

सन्त हमें ध्वनि करंट के पथ पर डालते हैं। जिससे हम अपने जीवनकाल में आगे के कर्मों से बच जाते हैं। जो आत्माएं सन्तों की शरण में आ जाती हैं अगर वे सन्तों के कहेअनुसार चलती हैं वे त्रिकुटी के पार सच्चखंड तक पहुँच जाती हैं। सन्त दयालु होते हैं। सन्त माफ करते हैं और जीव की मुनासिब मदद करते हैं। सन्तों का मिशन आत्माओं को मन के चुंगल से निकालकर ऊपर उठाना होता है।

आपका प्यारा,
सावन सिंह

सतसंग –परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज

रूहानियत

कबीर साहब की बानी

16 पी.एस. आश्रम राजस्थान

रोज की तरह कबीर साहब की बानी है। मैंने आपको बताया था कि जैसा किसी ने सवाल किया कबीर साहब वैसा ही जवाब दे रहे हैं। यह बानी किसी खास विषय पर नहीं। सभी सन्तों ने नाम की महिमा, गुरु की महिमा, सतसंग की महिमा गाई है। तुलसी साहब कहते हैंः

धन दारा सुत लक्ष्मी पापी के भी होए।
सन्त समागम हर कथा तुलसी दुर्लभ होए।।

महात्मा का सतसंग और 'नाम' प्राप्त करना ही संसार में दुर्लभ वस्तु है। बाकी चीजें जैसे धन, पुत्र तो पापियों के घर भी आ जाते हैं। पशु-पक्षी भी ऐश-ईशरतें करते हैं। हमारे ऊँचे भाग्य हैं कि हमें सतसंग का मौका मिला है। कबीर साहब अपनी बानी में बता रहे हैंः

कबीर हरदी पीअरी चूंना ऊजल भाइ।
राम सनेही तउ मिलै दोनउ बरन गवाइ।

कबीर हरदी पीरतनु हरै चून चिहनु न रहाइ।
बलिहारी इह प्रीति कउ जिह जाति बरनु कुलु जाइ।

कबीर साहब को दुनियावी मिसालें देने का बहुत तर्जुबा था। महात्मा हमें अपनी जिंदगी के आस-पास से ही समझाते हैं। हर महात्मा के समझाने का अपना ही तरीका होता है। गुरु गोविंद सिंह जी कहते हैंः

सन्त समूह अनेक मति के।

तीर अंदाज कितने भी हों सबका एक ही निशान होता है। **रूहानियत** के सन्त सच्चखंड से आते हैं उन सबका एक ही संदेश होता है। कबीर साहब कहते हैं, ''हल्दी का रंग पीला और चूने का रंग सफेद होता है

लेकिन दोनों के रंग में बहुत फर्क होता है। हम उन मालिक के प्यारों से 'नामदान' तभी प्राप्त कर सकते हैं जब हम इन दोनों रंगों का भिन्न भेद खत्म कर दें।''

बुल्लेशाह सयैद जाति के थे। मुसलमानों में सैयद जाति को उत्तम माना गया है, लोग उनका मान करते हैं। जिस तरह पंजाब में लोग सोढ़ी बेदियों को अच्छा गिनते हैं कि ये लोग गुरु नानकदेव जी की कुल में पैदा हुए हैं। बुल्लेशाह का गुरु अराई था। आमतौर पर लोग यह कहते कि बुल्ला एक सैयद होकर अराई की सेवा कर रहा है। इसने एक अराई को गुरु धारण किया है।

बुल्लेशाह ने सोचा! क्यों न मैं अपने आपको अराई ही साबित कर दूं। जब उसने लोगों में यह कहा कि मेरी जाति पाति अराई है तो बहनें, भाभियां, रिश्तेदार और यार-दोस्त उसे बुरा कहने लगे। बुल्लेशाह सच्चाई ब्यान करने लगा अगर कोई ईनायत शाह को बाहर से देखता है तो उसने फटे-पुराने कपड़े ही पहने हुए हैं अगर कोई अंदर जाकर ईनायत शाह को देखे तो वह बहिश्त में भी नहीं थूकेगा।

बुल्लेशाह ने कहा, ''जो मुझे अराई कहेगा उसे बहिश्त में जगह मिलेगी और जो मुझे सैयद कहेगा उसे दोज़क की आग में जलना पड़ेगा।'' यह है गुरु का प्यार। बुल्लेशाह कहते हैं:

इल्मों बस करीं ओ यार, इको अलफ तेरे दरकार।

कबीर साहब के कहने का मतलब है कि हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि गुरु की जाति हमारी जाति से नीची है। गुरु पढ़ा-लिखा नहीं मैं ज्यादा पढ़ा-लिखा हूँ। हम जब तक इस फर्क को खत्म नहीं करेंगे तब तक गुरु से फायदा नहीं उठा सकते।

महाराज सावन सिंह जी कहते हैं, ''**रूहानियत** में अलिफ बे की भी जरूरत नहीं होती। एम.ए. पास को पाँच साल के बच्चे जैसा बनना पड़ता है, तब कहीं जाकर हम तरक्की कर सकते हैं।''

जिस तरह एक छोटे से बच्चे को अपने घराने की बोली का पता नहीं होता, उसे किसी चीज का ज्ञान नहीं होता; उसके माता-पिता अंगुली पकड़कर उसे चलना और घराने की बोली सिखाते हैं। इसी तरह हम **रूहानियत** में मासूम बच्चे हैं। हमें नहीं पता कि कैसे अंदर जाना है? काल ने जीवों को फँसाने के लिए अंदर कौन-कौन से स्थान बनाए हुए हैं? सतगुरु उन स्थानों का जानकार होता है। हम उसके साथ ही अंदर जा सकते हैं वह बड़ी आसानी से हमें उन लहरों से बचाकर ले जाता है।

कबीर साहब हल्दी और चूने की मिसाल देकर समझा रहे हैं कि वह राम स्नेही परमात्मा का संदेश देने के लिए आया है। उसे वही अपने ऊपर मेहरबान कर सकता है जो इन भिन्न-भेदों को भूलकर गुरु की जाति को ही अपनी जाति समझे।

कबीर मुकति दुआरा संकुरा राई दसएं भाइ।
मनु तउ मैगलु होइ रहिओ निकसो किउ कै जाइ।।

सन्त-महात्मा हर मंजिल से गुजरे होते हैं। आप फिर स्पष्ट करते हुए कहते हैं, ''हमारी आत्मा ने जिस मुक्ति द्वार से गुजरना है वह रास्ता बहुत संकरा है।'' किसी महात्मा ने इस द्वार को बाल का दसवां हिस्सा कहा है। कबीर साहब इस द्वार को राई का दसवां हिस्सा कहते हैं। हमारा मन हाथी बना हुआ है। कोई कहता है, ''मेरी जाति ऊँची है।'' कोई कहता है, ''मैं ज्यादा समझदार हूँ।'' कोई कहता है, ''मैं ज्यादा पढ़ा-लिखा हूँ, मैं बहुत विद्वान हूँ, मैं बहुत शक्तिशाली हूँ।'' आप कहते हैं कि हमें इस रास्ते से निकलने के लिए उतना ही बारीक होना पड़ेगा।

सन्तमत बातों का और मैं-मेरी का मत नहीं, यह करनी का मत है। सब कुछ करके भी यही कहना पड़ता है, ''तेरी ही दया थी मैं कुछ भी करने योग्य नहीं था। मैं एक गरीब मासूम तेरे द्वारे पर आया हूँ। अगर तू मेरा पर्दा ढ़क ले!''

सच्चाई यह है कि जब हम अंदर जाते हैं तो पता लगता है कि सन्त-सतगुरु हमारे लिए क्या करते हैं वह किस ताकत के मालिक हैं।

कबीर ऐसा सतिगुरु जै मिलै तुठा करे पसाउ।
मुकति दुआरा मोकला सहजे आवउ जाउ।।

कबीर साहब कहते हैं कि ऐसा सतगुरु मिले जो अंदर **रूहानी** मंजिलों पर जाता है जिसे परमात्मा के दरबार में जाने में कोई रोकटोक नहीं। वह जब दया करता है अपना प्यार बख्शता है तो छोटा द्वार भी बड़ा बन जाता है, हम आसानी से इसमें से आते-जाते हैं। यह बड़े सोच-विचार की बात है कि जब हम खुद ही छोटे बन जाते हैं तो अपने आपको उस दरवाजे में से निकलने के काबिल बना लेते हैं।

कबीर ना मुोहि छानि न छापरी ना मुोहि घरु नही गाउ।
मत हरि पूछै कउनु है मेरे जाति न नाउ।।

पंडितों ने काशी में अच्छे-अच्छे घर और ठिकाने बनाए हुए थे, उनमें अच्छे फर्नीचर लगाए हुए थे। वे कबीर साहब को ताना मारते कि तू रोज लोगों से बातचीत करता है तेरे पास लोग इकट्ठे भी होते हैं लेकिन तेरा तो अपना घर भी नहीं है। परमात्मा तुझे कैसे मंजूर करेगा? कबीर साहब कहते हैं, ''यह ठीक है कि मेरा घर नहीं है, मैं एक और ही जाति का आपके शहर में बसा हुआ हूँ। आप लोग मुझे कोई खास आदर-मान भी नहीं देते लेकिन मेरे अंदर परमात्मा प्रकट है। परमात्मा ने मुझसे यह नहीं पूछना कि तेरा घर, गाँव है या नहीं? परमात्मा ने तो प्यार मौहब्बत ही देखनी है।''

रामायण में आता है कि रावण की चौदह ऊँची-ऊँची अटारियां थी, जिनमें हीरे-जवाहरात की मीनाकारी की हुई थी। वह सबसे ज्यादा धनी था। कबीर साहब बानी में कहते हैं:

लंका गढ़ सोने का पया, मूर्ख रावण क्या ले गया।
कहत कबीर कुछ गुण विचार, चले जुआरी दोय हाथ झाड़।

जिस तरह जुआरी दोनों हाथ झाड़कर शाम को घर आ जाता है उसके पल्ले कुछ नहीं होता। इसी तरह जीव की कहानी है कि यह हाथ झाड़कर संसार से चला जाता है।

कबीर मुहि मरने का चाउ है मरउ त हरि कै दुआर।
मत हरि पूछै कउनु है परा हमारे बार।।

कबीर साहब कहते हैं, ''यह बातों का मजबून नहीं। मेरे दिल के अंदर मरने की बहुत चाहत है लेकिन कहाँ मरूं?'' आप कहते हैं:

मरता मरता जग मुआ, मरम न जाना कोय।

आप कहते हैं कि दुनिया मरती है काल छोड़ता नहीं ले जाता है लेकिन मरना भी सीखना पड़ता है। मैं 'नाम' जपता हुआ शब्द में जुड़ा हुआ मरूं। परमात्मा ने मुझसे क्या पूछना है? मैं उसके द्वार पर जाकर मरूं तभी अच्छा है तो उसे खुद ही पता लगे कि यह मेरा है इसलिए मेरे द्वारे पर आया है।

कबीर ना हम कीआ न करिहिगे ना करि सकै सरीरु।
किआ जानउ किछु हरि कीआ भइओ कबीरु कबीरु।।

जब काशी में कबीर साहब का बहुत प्रताप हुआ तब पंडित लोगों ने सोचा! इसे किस तरह बेइज्जत किया जाए? उन्होंने मिलकर इस तरह के पत्र निकाले कि फलानी तारीख को फलाने समय पर कबीर साहब के घर यज्ञ है हर आदमी को मुफ्त खाना दिया जाएगा। हर एक सन्यासी, ब्राह्मण, साधु, योगी उनके घर पहुँचकर खाना खाए और इस समागम को कामयाब बनाए।

दिए गए समय पर लोग आने शुरू हो गए। कबीर साहब को पता नहीं था कि क्या बात है? लोगों ने पत्र दिखाकर कहा कि यह आपका प्रमाण पत्र है क्या यह आपके द्वारा भेजा हुआ नहीं है? कबीर साहब खामोश हो गए कि इस कौतुक के पीछे गुरु की ताकत ही काम कर

रही है। सन्त-महात्मा में कमाल का भरोसा होता है। गुरु के बिना पत्ता तक नहीं हिलता। यह सब गुरु का ही खेल है। आपकी सेवादार माता लोई घबराई। आपने कहा, ''घबराने की क्या जरूरत है, इज्जत या बेइज्जती सब कुछ गुरु का ही है हमारा क्या है? गुरु का ही लंगर है।''

आपे संगत सद बहाले आपे विदा करावे।
आपे जल आपे दे शिंगा आपे चुली करावे।

वह आप ही परोसता है, आप ही खाता है आप ही आशीषें देकर जाता है कि बहुत अच्छा भंडारा था। कबीर साहब ने माता लोई से पूछा, ''घर में कुछ खाना है?'' माता लोई ने कहा, ''घर में दो-चार लोगों का खाना है।'' आपने कहा वह खाना ले आओ। आपने उस खाने के ऊपर कपड़ा डालकर कहा कि सबको खाना बाँटते चलो।

सारा दिन खाना बरताया गया जब कोई कमी न आई तो पंडितों ने सोचा यह तो फिर कामयाब हो गया। पंडितों ने कहा कि शास्त्र मर्यादा है कि हमें दाँत घिसाई दी जाए। आप जानते हैं चाहे अपने घर में सूखे टुकड़े मिलते हों लेकिन दूसरे के घर में जाकर खीर खाएं तो दाँत घिस जाते हैं। पंडितो ने सोचा कि यह पैसे कहाँ से देगा इसका कोई घर-बार ही नहीं है।

कबीर साहब ने कहा पंडित जी! आप नाराज क्यों होते हैं शान्त मन से बताएं आपको क्या चाहिए? उन्होंने जो कुछ मांगा आपने वह भी दे दिया। कबीर साहब को गुरु पर भरोसा था वहाँ गुरु ताकत काम करती थी। आपने यही कहा, ''सतगुरु अगर लाज रहती है तो तेरी है अगर बेइज्जती होती है तो भी तेरी है मेरा किसने नाम लेना है?'' आपके सतसंगी धन्य कबीर! धन्य कबीर! कहकर चले गए।

मनमुख जे समझाईए पी औजड़ जाए।

कबीर साहब कहते हैं, ''प्यारेयो! न मैंने कुछ किया है और न भविष्य में कर ही सकता हूँ। यह सब उस परमात्मा गुरुदेव की ही दया है जो पर्दे के पीछे सब कुछ कर रहा है।''

कबीर सुपनै हू बरड़ाइकै जिह मुख निकसै रामु।
ताके पग की पानही मेरे तन को चामु।।

जिन महात्माओं को नाम की महिमा, नाम की ताकत और नाम के फायदे का ज्ञान हो जाता है वे कहते हैं, ''अगर सपने में बरड़ाकर भी जिसे मालिक की याद आ जाए! मैं उस इंसान के पैरों में अपने तन के चमड़े की जूतियां पहनाने के लिए तैयार हूँ।'' गुरु रामदास जी की बानी में आता हैः

जिन हर हृदय नाम न वसयो तिन मात कीजे हर बांझा।

आप कहते हैं कि जिसके हृदय में 'नाम' नहीं बसा उसकी माता बांझ ही क्यों न रह गई।

कबीर माटी के हम पूतरे मानसु राखिओ नाउ।
चारि दिवस के पाहुने बड बड रूंधहि ठाउ।।

हम मिट्टी के पुतले हैं। यह शरीर हवा, मिट्टी, पानी, आकाश पाँच तत्वों से बना है। हमें यहां चार दिन खेलने के लिए छोड़ा हुआ है। यह काल की रचना है पता नहीं उसने कब आवाज मार देनी है! जैसे कोई मेहमान किसी के घर जाकर उसे अपना घर समझे तो वह पागल है।

महाराज सावन कहा करते थे, ''कोई राहगीर चला जा रहा है रास्ते में पेड़ आ जाता है, गर्मी के दिन हैं वह पेड़ के नीचे आराम करने के लिए बैठ जाता है अगर वह समझदार है तो थोड़ी देर आराम करके अपनी मंजिल पर पहुँचेगा अगर भूला हुआ है तो उसे अपना ठिकाना समझेगा।'' उस पेड़ का मालिक आकर कहेगा कि तू समझदार नहीं डाक्टर को जाकर दिखा। गुरु नानकदेव जी कहते हैंः

बटाऊ स्यों जो लावे नेह, ताँके हाथ न आवे खेह।

हम सब यहाँ पर बटाऊ (मुसाफिर) हैं। हम सब एक-दूसरे से कहते हैं कि तेरे बगैर मेरा गुजारा नहीं होता। आप जानते ही हैं कि

पति को पत्नी ने छोड़ जाना है, पत्नी को पति ने छोड़ जाना है। माता-पिता चले जाते हैं बच्चे रह जाते हैं। बच्चे चले जाते हैं माता-पिता रूलते फिरते हैं। कहने का भाव यह है कि यहाँ हम सब बटाऊ की तरह हैं।

कबीर महिदी करि घालिआ आपु पीसाइ पीसाइ।
तैसह बात न पूछीऐ कबहु न लाई पाइ।।

कबीर जिह दर आवत जातिअहु हटकै नाही कोइ।
सो दरु कैसे छोडीऐ जो दरु ऐसा होइ।।

कबीर साहब मेहन्दी की मिसाल देते हुए समझाते हैं कि जब हम पेड़ से मेहन्दी के पत्ते तोड़कर लाते हैं तब उन पत्तो में कोई रंग दिखाई नहीं देता। मेहन्दी को अच्छा कहलवाने के लिए कून्डे में डंडे की रगड़ सहनी पड़ती है; रगड़ सहना कोई आसान काम नहीं। बेशक आम लोग इसे लगाएं या न लगाएं लेकिन जीवन के जिस पवित्र दिन प्रेम के बंधन में बंधते हैं उस दिन शगन मनाने के लिए दूल्हा-दूल्हन मेहन्दी का इस्तेमाल करते हैं, हर आदमी उस मेहन्दी की तरफ देखता है।

कबीर साहब कहते हैं कि कभी ख्याल किया कि मेहन्दी को अपना आप बताने के लिए कितने रगड़े, कितने कष्ट सहने पड़ते हैं। इसी तरह हमें भी अभ्यास रूपी चक्की में पिसना पड़ता है अपने आपको खत्म करना पड़ता है। रातें जागकर मेहनत करनी पड़ती है। तभी हमारा सतगुरु परमात्मा अपने प्यार की मेहन्दी की रंगत हमारे ऊपर उचारेगा।

आप कहते हैं कि जब हम मेहन्दी की तरह रगड़ सहकर अभ्यास करते हैं तब गरीब-अमीर, पढ़ा-लिखा-अनपढ़, औरत-मर्द या किसी भी जाति के लिए रूकावट नहीं। हमें भूलकर भी उस दर को नहीं छोड़ना चाहिए लेकिन हमें पता नहीं कि वह दर कौन सा है? वह परमात्मा का दरवाजा है। हम मामूली बातों में उलझकर रह जाते हैं कि यह छोटी जाति वाला है इसके हाथ का पानी पीना है या नहीं? जो प्यार लेकर जाता है उसके लिए परमात्मा का दरवाजा हमेशा खुला है।

कबीर डूबा थापै उबरिओ गुन की लहरि झबकि।
जब देखिओ बेड़ा जरजरा तब उतरि परिओ हउ फरकि।।

कबीर साहब बहुत अच्छी मिसाल दे रहे हैं कि जब तक 'शब्दनाम' नहीं मिला था हम कर्मकांडो में लगकर डूबे जा रहे थे। जब गुरु ने जानकारी दी तो मैंने फौरन ही अपने ख्यालों को पलटा दिया कि इस शरीर का क्या भरोसा है यह तो बहुत पुराना बेड़ा है।

बुल्लेशाह मस्जिद का मुल्ला था। उनका पिता भी मस्जिद का मुल्ला था। यह उनका खानदानी काम था। बुल्लेशाह काफी आमिल-फाजिल था। बुल्लेशाह का मिलाप शाह ईनायत के एक सतसंगी के साथ हुआ। उस सतसंगी ने बुल्लेशाह से पूछा, ''तू रोज गला फाड़कर ऊँचा-ऊँचा गाता है क्या वह खुदा बहरा है?''

मुल्ला मनारे क्या चढ़े साईं न बहरा होय।
जां कारण तूं बांग दे दिल ही भीतर जोय।

खुदा तेरे अंदर बैठा है वह तेरे साँस की आवाज को भी सुनता है। तू शाह ईनायत के पास जा वह तेरे कान की मोहरो को खोलेगा। बुल्लेशाह ने ईनायत शाह के पास जाकर कहा, ''महाराज जी! मैं आपसे रब का रास्ता पूछने के लिए आया हूँ। मैंने बहुत सी किताबें पढ़ी है लेकिन मुझे किताबों से कुछ नहीं मिला। मुझे पता लगा है कि रब को दिखाने की चाबी आपके पास है। आप मुझे साधन बताएं कि किस तरह रब को पाया जा सकता है।''

शाह ईनायत उस समय खेती का काम कर रहे थे। आपने सोचा अगर मैं इसे किताबों की मिसाल दूँगा तो यह नहीं समझ सकेगा। शाह ईनायत ने खेती की तरफ इशारा करते हुए कहाः

रब दा की पावणां एदरो पुटना ते ओदर लावणां।

बुल्लेया! अपने ख्याल को दुनिया की तरफ से हटाकर परमात्मा की तरफ लगाना है।

हमने अपने ख्याल को ऐसा पलटा दिया जो कुछ पहले करते थे उसे ठप्प करके रख दिया। स्वामी जी महाराज कहते हैं:

जब जीव शरण गुरु की आवे कर्म धर्म सब भ्रम नसावे।
जो मार्ग गुरु दे बताई सोई कर्म धर्म हुआ भाई।

कबीर पापी भगति न भावई हरि पूजा न सुहाइ।
माखी चंदनु परहरै जह बिगंध तह जाइ।।

कबीर साहब कहते हैं, ''पापी आत्मा को भक्ति अच्छी नहीं लगती और भक्ति करने वाले भी अच्छे नहीं लगते। जिस तरह मक्खी चंदन, कस्तूरी और मुश्क कपूर पर नहीं बैठती सारा दिन गंदी जगह पर भिन-भिन करती है। साकत पुरुषों का भी यही काम होता है कि जहाँ बुरी बातें होती हैं शराब-कबाब का दौर चलता है वहाँ उनका दिल लगता है लेकिन जहाँ नाम का प्रचार है वे वहाँ जाकर खुश नहीं होते।'' गुरु नानकदेव जी कहते हैं:

वल छलकर झट कड दे फिर जाए बहन कूडियारां पास।
ओथे सच वरतदा कूडियारा चित्त उदास।

अगर वे भूल से किसी रिश्तेदार, भाई-बहन के कहने पर सतसंग में आ भी जाएं तो वहाँ उनकी ऐसी हालत होती है कि वे कभी सिर झुकाते हैं कभी सोते हैं या बाथरूम के बहाने बीच में ही उठकर चले जाते हैं। वे फिर उन्हीं यारों-दोस्तों के पास जाकर बैठ जाते हैं और पहले जैसी बुरी बातें करते थे फिर वही बातें करने लग जाते हैं।

ओना रिजक न पाया ओथे ओना होर खाणा।

उनका वहां खाना नहीं होता। उनका खाना-पीना शराब-कबाब विषय-विकार और बुरे ख्याल हैं। महात्मा सतसंग में 'नाम' का होका देते हैं, नाम के मोती बिखेरते हैं।

कबीर बैदु मूआ रोगी मूआ मूआ सभु संसारु।
एकु कबीरा ना मूआ जिह नाही रोवनहारु।।

किसी ने कबीर साहब के पास आकर बताया कि वह वैद्य बहुत अच्छा था। वह हर एक को अच्छी दवाई देकर ठीक करता था आज वह खुद ही मर गया है। सन्त-महात्मा दवाई बूटी करने को बुरा नहीं कहते लेकिन सच्चाई यह हैः

औखद आए रास जेह विच आप खलोया।

गुरु नानकदेव जी कहते हैं, ''वही दवाई रास आती है जिसमें परमात्मा आकर खुद मदद करे।'' कबीर साहब ने कहा देख प्यारेया! वैद्य ही नहीं मरा, सब मरीजों ने बारी-बारी मर जाना है। सारे संसार ने ही मर जाना है सिर्फ एक ताकत नहीं मरती वह परमात्मा है; जो पहले भी था अब भी है और आगे भी उस परमात्मा ने ही रहना है।

कबीर रामु न धिआइओ मोटी लागी खोरि।
काइआ हांडी काठ की ना ओहु चहै बहोरि।।

कबीर साहब एक बहुत अच्छी मिसाल देकर समझाते हैं कि हम संसार में आते हैं परमात्मा ने हमें यह मौका अपनी भक्ति के लिए दिया है। आत्मा इस देह में रहती है और हमें यह देह बहुत अच्छी लगती है। जिस तरह काठ की हांडी एक बार ही आग पर चढ़ती है तो जलकर राख हो जाती है हम उसे दूसरी बार इस्तेमाल नहीं कर सकते। इसी तरह आज तुझे यह देह प्यारी लगती है तू इसके साथ प्यार करता है इसे छोड़ने के लिए तैयार नहीं। कहता है कि मेरी सुरत तो ऊपर गई थी लेकिन दर्द हुआ इसलिए मैं उठकर खड़ा हो गया। प्यारेयो! हम मरना नहीं जानते इस देह से निकलना नहीं जानते। वह वक्त याद हैः

जिन्द निमाणी कडिए हड्डा कू कड़काए।

हम खुद तो तैयार नहीं लेकिन काल ने इस आत्मा को जबरदस्ती निकाल लेना है। एक बार यह देह हाथ से निकल गई तो फिर काठ की हांडी की तरह दोबारा नहीं मिलेगी।

कबीर ऐसी होइ परी मन को भावतु कीनु।
मरने ते किआ डरपना जब हाथि सिधउरा लीन।।

कबीर रस को गांडो चूसीऐ गुन कउ मरीऐ रोइ।
अवगुनीआरे मानसै भलो न कहिहै कोइ।।

कबीर साहब कहते हैं, ''दिल में तमन्ना थी कि 'नाम' मिले गुरु मिले। जिस तरह सति अपने पति के साथ चिता पर जलने के लिए जाती है तब वह नारियल अपने हाथ में ले लेती है अगर उस समय वह आग के सेक से डरती हुई भाग आती है तो हिन्दु लोग उसे अपने घर में नहीं रखते, चंडालों के घर भेज देते हैं।''

आप कहते हैं कि यह तो एक मिसाल है। जब आप भक्ति मार्ग पर आ गए हैं तो आपने एक किस्म का नारियल अपने हाथ में ले लिया है। लोगों को भी पता लग गया कि यह सतसंगी है इसके पास 'नाम' है। अब आप मरने से, शरीर की दर्दों से और मन-इन्द्रियों के घाट से ऊपर उठने से क्यों डरते हैं? गुरु गन्ने के रस की तरह भरपूर होते हैं आप भी उस रस को पिएं वह रस मीठा है।

प्यारेयो! भजन-सिमरन करना रातें जागना परमात्मा के आगे फरियाद करना ही है कि तू हमारे ऊपर दया-मेहर कर अगर आप उस रस को प्राप्त नहीं करते तो किसी ने आपको अच्छा नहीं कहना। लोग तो यह भी कह देते हैं कि यह सतसंगी है, कितने बुरे कर्म करता है।

कुछ साल पहले मैं गाँव किल्लेयांवाली गया। किल्लेयांवाली के सेवादार का पड़ोसी मेरे पास आया और उसने इनके मुँह पर कहा, ''ये आपके पास जाना छोड़ दें या अच्छे आदमी बन जाएं!'' ये लोग उस आदमी की बात का गुस्सा करने लगे। मैंने कहा, ''देखो भाई! आप इसकी बात पर गुस्सा न करें इसके पैर पकड़े यह तुम्हारे ऐब बता रहा है। सच्चाई तो यह है कि यह तुम्हारी मदद कर रहा है। हमारे ऐब हमारा विरोधी या सन्त-महात्मा ही बता सकते हैं।''

सन्त-महात्मा प्यार से कहानी सुनाकर समझा देते हैं लेकिन विरोधी खुले रूप में कह देते हैं कि तुममें यह नुख्स है। वह पड़ोसी यह भी कह रहा था, ''अगर मैं सन्तमत की तरफ लग गया तो ऐसा नहीं करूंगा जैसा ये करते हैं।''

कबीर साहब कहते हैं कि हमें यहाँ ताने मिलते हैं। हमने जिस परमात्मा को खुश करने के लिए नामदान प्राप्त किया है क्या अंदर जाकर उस गुरु परमात्मा को खुश कर लेंगे?

कबीर गागरि जल भरी आजु काल्हि जैहै फूटि।
गुरु जु न चेतहि आपनो अधमाझ लीजहिगे लूटि।

कबीर साहब कहते हैं, ''यह देह कच्ची गागर की तरह है जिस तरह गागर में पानी रखें तो पानी उस गागर को गला देता है। इसी तरह हमारी देह भी गागर की तरह स्वाशों से भरी हुई है।'' स्वामी जी महाराज कहते हैं:

मश्क समान जाण ऐह देही ईक दिन खाली जाण।
श्वांस दो धारा नित ही चालू इक दिन दोनों खाली चाम।

यह देह मश्क के समान फूली हुई है एक दिन इसने खाली हो जाना है। हम किसी डिग्गी में से एक तरफ से पानी निकालते हैं तो वह डिग्गी खाली हो जाती है। इसी तरह हमारा श्वास ऊपर जाता है तो भी खत्म है नीचे आता है तो भी खत्म हैं; हमारे गिनती के श्वांस हैं। जिन्होंने गुरु को प्रकट नहीं किया, गुरु के कहे अनुसार नहीं चले उन्हें यम बीच में ही लूट लेंगे।

हमारे दिल में यह ख्याल है कि गुरु ने हमें ले जाना है! क्या गुरु ने किसी से कर्ज लिया है कि गुरु आए और हम कुछ न करें? नालायक बच्चा कहता है कि पिता कमाए और मैं खाऊं। लड़के का भी फर्ज है कि अपने पैरों पर खड़ा हो। सेवक का भी धर्म बनता है कि अपने आपको सुधारे। जीते जी उसमें से 'नाम' की खुशबू आए, आत्मा मन के पंजे से

आजाद हो। गुरु अपनी जगह काम करता है सेवक को भी चाहिए कि अपनी जगह काम करे। आप सोचते हैं! अन्त समय इधर ख्याल आ जाएगा। हम सारी जिंदगी जो काम करते हैं हमें वही ख्याल आएंगे।

कबीर कूकरु राम को मुतीआ मेरो नाउ।
गले हमारे जेवरी जह खिंचै तह जाउ।।

जो महात्मा सच्चखंड पहुँच जाते हैं उनमें बहुत नम्रता और आजजी होती है। मैं उस राम परमात्मा का कुत्ता हूँ, मेरा नाम मोती है। मेरे गले में जो डोर है वह परमात्मा के हाथ में है। वह जिस तरफ खींचता है मैं उस तरफ जाता हूँ। नम्रता दिखावे की नहीं होती।

महाराज सावन सिंह जी कहा करते थे, ''जो लोग दिखावे की नम्रता रखते हैं वे बहुत बड़ा धोखा कर रहे होते हैं। हमने नम्रता अंदर से धारण करनी है यह दिखावे की चीज नहीं।'' गुरु नानकदेव जी ने भी अपने आपको पुतली कहकर बयान किया है।

काठ की पुतली कहां करे बपुरी खिलावड़ हारो जाने।
जैसा भेष करावे बाजीगर तेसो ही सा जाने।

आप प्यार से कहते हैं मेरी डोरी उस परमात्मा के हाथ में है। मैं कहा करता हूँः

जित्थे भेजे ओत्थे जावां दित्ता तेरा सदा ही खावां।
मैं हां पुतली तेरे हाथ डोर दातेया।

तू मुझे जहाँ भेज देता है, मैं वहाँ चला जाता हूँ। खाने के लिए जो रूखा-सूखा दे देता है मैं वह खा लेता हूँ। मैं एक पुतली हूँ मेरी डोर तेरे हाथ में है। बहुत से प्रेमियों के पश्चिम से पत्र आते हैं वे खुद आकर भी कहते हैं कि आप हमारे यहाँ आएं। मैं उन्हें कहता हूँ, ''देखो प्यारेयो! हुजूर कृपाल का हुक्म, आपका प्यार और बीच में मैं हूँ अगर वह आज्ञा देंगे तो मैं आपकी सेवा में हाजिर हो जाऊंगा। आपका प्यार खींच लेगा मैं आ जाऊंगा मेरे हाथ में न आना है न जाना है। मैं न कभी अपना

संदेश लेकर गया हूँ न आपको कुछ नया बताने के लिए आया हूँ। मैं आपको सावन-कृपाल का संदेश देने के लिए और उनका दिया हुआ प्यार आपके साथ बाँटने के लिए आया हूँ।''

कबीर जपनी काठ की किआ दिख्लावहि लोइ।
हिरदै रामु न चेतही इह जपनी किआ होइ।।

काशी पुरी में एक भेष धारण किया हुआ साधु आया जिसने रुद्राक्ष के मोतियों की बहुत मोटी माला पहनी हुई थी। उसने कबीर साहब से पूछा कि तुझे बहुत लोग मानते हैं लेकिन तूने कोई माला नहीं पहनी हुई, भक्तों वाला कोई चिह्न तिलक वगैरहा नहीं लगाया हुआ। कबीर साहब ने कहा, ''तू माला पहनकर लोगों को दिखाता है लेकिन जब तेरे ह्रदय में 'नाम' नहीं टिका, राम ही प्रकट नहीं हुआ तो यह काठ की माला फेरना किस काम का?''

कबीर बिरहु भुयंगमु मन बसै मंतु न मानै कोइ।
राम बिओगी ना जीऐ जीऐ त बउरा होइ।।

ईश्क वाले बाजार में जाकर इंसान अपने गुरु के नाम में बिना दाम के बिक जाता है। अपनी रजिस्टरी करवाकर गुरु के हाथ में पकड़ा देता है कि मैं बिना दाम तेरे हाथ में बिक चुका हूँ। अब तू मुझसे घास खुदवा, रूखा-सूखा दे चाहे कार पर चढ़ा ये सब तेरी मर्जी है। मैं चूं-चरा के योग्य नहीं हूँ। यह विरह है। जब महाराज सावन के अंदर प्रेम जागा तो उन्होंने कहाः

जिन्हां लग्गे प्रेम तमाचे घर के कम्मों गईयां।
लेणा देणा सब छुटया ते खूह विच पईयां बहियां।

जब विरह मन में घर कर लेती है तब यार-दोस्त समझाते हैं कि ऐसी कौन सी मुसीबत आ गई है कि जो तू अभी से ही भक्ति करने में लगा है। माता-पिता कहते हैं कि बेटा! अभी तू जवान है। तेरा काम तो खाना-पीना है। हम बूढ़े हैं, भक्ति करना हमारा काम है।

जिसके अंदर परमात्मा का प्यार जाग जाता है उसे ये सब चीजें अच्छी नहीं लगती। उसके मन में परमात्मा का वियोग जाग जाता है कि मेरी कोई चीज खो गई है मैं उसे प्राप्त करूं! मैं उससे बिछड़कर कहाँ फिर रहा हूँ? वह गुरु के दर पर जाकर अपने आपको खत्म कर देता है। जितनी देर गुरु ने उससे काम लेना है वह दुनिया के काम का नहीं रहता, घर-घाट में रहता हुआ भी अलग ही रहता है। सन्तों के दर में हमेशा ही कथा-कीर्तन होता रहता है। महाराज सावन कहा करते थेः

गल्ला होन्दियां साध दे डेरे भागी तेरे चक्कन दियां।

भागी रूह को कहते हैं। साधु के डेरे में यही बातें होती हैं कि किस तरह रूह को मन-इन्द्रियों से आजाद करना है।

कबीर पारस चंदनै तिन्ह है एक सुगंध।
तिह मिलि तेऊ ऊतम भए लोह काठ निरगंध।।

कबीर साहब कहते हैं कि पारस और चंदन का एक ही स्वभाव है। बेशक पारस मैले लोहे को लग जाए उसे सोना बना देता है बेशक लकड़ी कैसी भी हो चंदन उसके अंदर सुगंधी भर देता है। इसी तरह सन्तों के पास पापी-पुन्नी, अधिकारी-अनअधिकारी कोई भी आए इसका सवाल नहीं लेकिन जब नाम ले लिया। जहाँ है वही खड़ा रहे। आगे के लिए शरीफ बनकर 'नाम' की कमाई करने लग जाए। सन्त-महात्मा उसके अंदर भी चंदन की तरह सुगंधी भर देते हैं।

गुरु बेचारा क्या करे जे सिक्खा में चूक।
अंधे एक न लग्गी ज्यों बाँस बजाई फूँक।

प्यारेयो! सतसंग में आकर भी अगर एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल दिया तो उसमें गुरु का क्या कसूर हो सकता है?

कबीर जम का ठेंगा बुरा है ओहु नही सहिआ जाइ।
एकु जु साधू मुोहि मिलिओ तिन्ह लीआ अंचलि लाइ।।

कबीर साहब कहते हैं कि यम का दण्ड सहना बहुत मुश्किल है। परमात्मा का शुक्र है कि हम पर दया हुई, हमें गुरु मिले। गुरु ने नाम दिया, हमें नर्कों के लम्बे रास्ते और यमों से बचाया।

जब से संसार बना है उस समय से लोग यमों के डर से घर-बार को छोड़कर साधु बने उन्होंने जंगलों में जाकर अपने तन को हरड़ की तरह सुखा लिया। किसी ने इसे 96 करोड़ योजन तो किसी ने लाख करोड़ योजन लिखा है। प्यारेयो! जिन्होंने देखा है उन्होंने ही धर्मग्रन्थों में इसका जिक्र किया है कि यह रास्ता बहुत मुश्किल और दुखों से भरा हुआ है आप इन यमों से बचें।

कबीर बैदु कहै हउ ही भला दारु मेरै वसि।
इह तउ बसतु गुपाल की जब भावै लेइ खसि।।

डाक्टर, वैद्य कहते हैं कि मैं जिसे दवाई दे दूं वह राजी हो जाएगा लेकिन कबीर साहब कहते हैं प्यारेया! ये खोखली बातें हैं। इस शरीर के अंदर परमात्मा की ताकत काम करती है। परमात्मा की मौज है वह जब चाहे इसे वापिस बुला सकता है। तेरी दवाई सिरहाने के नीचे रखी रह जाएगी गले से नीचे नहीं होने दी जाएगी। यह परमात्मा की वस्तु है दम मारने की चीज नहीं।

कबीर नउबति आपनी दिन दस लेहु बजाइ।
नदी नाव संजोग जिउ बहुरि न मिलहै आइ।।

कबीर साहब कहते हैं कि आपको जो वक्त, हुकूमत और घर-बार की कारोबारी मिली है यह सब दस दिन की है, आप अपनी डयूटी बजा लें। जिस तरह दरिया में बेड़ी तैरती हैं उसमें जो सवारियां इकट्ठी होती हैं पता नहीं बाद में उन्होंने मिलना है या नहीं!

दरिया का पानी अलग-अलग होकर दो हिस्सों में बहता हुआ जा रहा था। उस पानी को देखकर गुरु नानकदेव जी ने कहाः

नदियां वाहे विछुन्नियां मेला संजोगी राम।

कबीर साहब कहते हैं, ''हमें पता नहीं हम फिर इस परिवार में आएंगे या नहीं, पता नहीं कहाँ जाकर जन्म लेंगे! जब हमें पिछले रिश्तेदार, पति-पत्नियां याद नहीं क्या अब वालों को याद रखेंगे? जब पहले रिश्तेदार साथ नहीं आए क्या अब वालों को साथ ले जाएंगे?''

कबीर सात समुंदहि मसु करउ कलम करउ बनराइ।
बसुधा कागदु जउ करउ हरिजसु लिखनु न जाइ।।

कबीर साहब प्यार से कहते हैं, ''चाहे मैं सात समुद्रों की स्याही बना लूं, सारी धरती का कागज बना लूं और सारी वनस्पति काटकर उसकी कलम बना लूं फिर भी मैं परमात्मा गुरु की महिमा लिखना चाहूं तो नहीं लिख सकता। वह जैसा है वैसा ही है।''

कबीर जाति जुलाहा किआ करै हिरदै बसे गुपाल।
कबीर रमईआ कंठ मिलु चूकहि सरब जंजाल।।

एक पंडित ने कबीर साहब को ताना मारकर कहा कि तेरी जाति नाम जपने के लिए नहीं है, तू भक्ति कर ही नहीं सकता। उस जमाने में पंडित लोग छोटी जाति वालों को भक्ति करने का अधिकार नहीं देते थे। कबीर साहब ने कहा, ''परमात्मा मेरे अंदर बस गया है। मेरे कंठ में प्रकट हो गया है तो इसमें मेरी जुलाहा जाति का क्या कसूर है? परमात्मा ने मेरा आना-जाना ही काट दिया है।'' ***

परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज द्वारा प्रेमियों के सवालों के जवाब

सभी सन्त एक होते हैं

77 आर.बी आश्रम राजस्थान

एक प्रेमी : - *अगर हमें एक से ज्यादा धुन सुनाई देती हैं या एक धुन को सुनते ही दूसरी धुन भी सुनाई देने लगे जो दाईं ओर से आ रही है तो कौन सी धुन सुनी जाए?*

बाबा जी : - शुरू में हमारा मन स्थिर नहीं होता तब हमें अलग-अलग धुन की आवाजों का अनुभव होता है अगर हम सिमरन करते रहें तो हम यह जान जाएंगे कि सभी धुनों की आवाजें एक ही हैं। शुरू में आपको अलग-अलग आवाजें एक साथ सुनाई देंगी लेकिन बाद में ये सब एक ही बन जाएंगी क्योंकि धुन एक ही है।

एक प्रेमी : - *मैंने पढ़ा है कि **सभी सन्त एक होते हैं।** मैंने यह भी पढ़ा है जिसमें आपने कहा है कि कुछ सन्त दुनिया में बार-बार आते हैं। क्या इस बारे में आप हमें कुछ बताना चाहेंगे?*

बाबा जी : - सच्चखंड से आने वाले **सभी सन्त एक होते हैं।** इस विषय पर कुछ भी कहने की जरूरत नहीं क्योंकि जो भी सन्त सच्चखंड पहुँचते हैं वे एक हो जाते हैं। कई सन्त इस दुनिया में बार-बार आए जैसे कबीर साहब चारों युगों में आए। जब कोई गुरु दोबारा धरती पर आता है तो उसके बारे में लोगों को पता होता है लेकिन कुछ गुरु इस दुनिया में बार-बार आते हैं उनके बारें में पता नहीं होता।

रविदास का इतिहास देखा जाए तो कहा गया है कि रविदास के रूप में जन्म लेने से पहले भी आपने इस धरती पर जन्म लिया। पिछले जन्म में रविदास, रामानन्द के शिष्य थे। रामानन्द को कबीर साहब का गुरु कहा गया है। रामानन्द के कई शिष्य थे। उन दिनों में साधु अपनी जीविका खेती-बाड़ी या और किसी काम से नहीं चलाते थे। वे घर-घर से

भीख माँगकर अन्न इकट्ठा करते और उसी अन्न को खाकर भजन-सिमरन किया करते थे।

एक बार की बात है कि सर्दी के दिनों में बारिश हो रही थी। रामानन्द ने अपने एक शिष्य ब्रह्मचारी से कहा, ''मेरे लिए खाना माँगकर ले आओ।'' ब्रह्मचारी खाना माँगने के लिए निकल पड़ा। ब्रह्मचारी एक व्यापारी के घर के आगे से निकल रहा था। उस व्यापारी ने पूछा, ''अरे ब्रह्मचारी! कहाँ जा रहे हो?'' ब्रह्मचारी ने कहा कि मैं अपने गुरु के लिए खाना माँगने जा रहा हूँ। व्यापारी ने कहा, ''इस समय बहुत सर्दी है, बारिश भी हो रही है घर-घर मत जाओ तुम्हें जितना खाना चाहिए हमारे घर से ले लो।'' बह्मचारी व्यापारी के घर से खाना लेकर रामानन्द के पास आ गया।

रामानन्द ने उस खाने को खाया। जब वह रात को भजन-सिमरन के लिए बैठा तो उसे शान्ति नहीं मिली क्योंकि वह अपने आपको एकाग्र नहीं कर पा रहा था और उसे भजन में आनन्द नहीं आ रहा था। अगली सुबह रामानन्द ने ब्रह्मचारी से पूछा, ''कल तुम मेरे लिए खाना कहाँ से माँगकर लाए थे?'' ब्रह्मचारी ने कहा, ''वह खाना व्यापारी के घर का था।'' रामानन्द जानता था कि ये व्यापारी ईमानदार नहीं होते। रामानन्द ब्रह्मचारी से नाराज होकर कहने लगा, ''मैंने जैसे तुम्हें बताया हुआ है तुमने घर-घर जाकर खाना क्यों नहीं माँगा? तुम आलसी हो। कल रात मैं भजन-सिमरन नहीं कर सका। मैं तुम्हें श्राप देता हूँ कि अगले जन्म में तुम नीच जाति के परिवार में जन्म लोगे।''

यह कहानी रविदास के पहले जन्म की है। अगले जन्म में वह एक नीच जाति - चमारों के घर में पैदा हुए। रविदास एक अच्छी आत्मा थी उन्हें जन्म के समय ही यह पता लग गया था कि एक छोटी सी गलती की वजह से उन्हें दूसरा जन्म लेना पड़ा है नहीं तो पिछले जन्म में ही मुक्ति मिल जाती। अब उनका जन्म एक नीच जाति के परिवार में हुआ है। वह अपनी माँ का दूध भी नहीं पीना चाहते थे अगर वह अपनी माँ

का दूध पिएंगे तो उन्हें इस नीच जाति वाले परिवार के बुरे कर्मों का बोझ ढ़ोना पड़ेगा। इस तरह उन्होंने तीन दिन तक दूध नहीं पिआ और अपना अंगूठा चूसते रहे।

रविदास के माता-पिता बहुत चिन्तित हुए क्योंकि बच्चा दूध नहीं पी रहा था। रामानन्द उसी शहर काशी में रहते थे। माता-पिता ने रामानन्द से जाकर प्रार्थना की, ''गुरुदेव! हमारे घर में एक पुत्र ने जन्म लिया है। तीन दिन से उसने एक बूँद भी दूध का नहीं पिआ है। हम नहीं जानते कि यह किसकी दया से जीवित है। क्या आप हमारे घर आकर उसे आर्शिवाद देंगे ताकि वह दूध पीना शुरू कर दे!''

रामानन्द जानते थे कि यह वही ब्रह्मचारी है। अब यह नीच जाति के परिवार के बुरे कर्मों को उठाने से डर रहा है। रामानन्द उस घर में गए और उस बच्चे से कहा, ''तुम्हें दूध पीने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए। तुम्हें इनके बुरे कर्म नहीं उठाने पड़ेंगे। तुम आलसी हो गए थे इस वजह से मैंने तुम्हें श्राप दिया था। अब तुम इस जन्म में कोई गलती नहीं करोगे।'' तब उस बच्चे ने दूध पीना शुरू कर दिया।

कई ऐसे महात्मा हैं जिन्होंने दुनिया में सिर्फ आत्माओं के लिए ही बार-बार जन्म लिया। जिन महात्माओं के बारे में लोगों को पता चला उन महात्माओं ने खुद ही अपने पहले जन्म के बारे में संकेत दिए। जब हमें उच्च स्थान मिलता है या जब हमें मुक्ति मिलती है या जब हम परमात्मा के साथ एक हो जाते हैं तब आत्मा को पता चलता है कि वही अन्त है और वही शुरूआत है। उस समय आत्मा और परमात्मा के बीच कोई अंतर नहीं रह जाता।

सन्त दुनिया में आकर कभी यह नहीं कहते कि उनमें और परमात्मा में कोई अंतर नहीं। वे जब भी ऐसा कहते हैं तो धर्म के ठेकेदारों को यह अच्छा नहीं लगता है, वे सन्तों के लिए मुसीबतें खड़ी कर देते हैं।

जब मंसूर ने कहा, ''अन अल हक।'' जिसका मतलब यह है कि मैं ही भगवान हूँ। उस समय के लोगों ने उन्हें मौत के घाट उतार दिया।

और भी जिन गुरुओं ने यह कहा कि उनमे और परमात्मा में कोई फर्क नहीं उन्हें भी लोगों ने बहुत दुख दिए।

मुल्तान में कई पीर, सन्त-महात्माओं ने जन्म लिया। शम्श तबरेज भी वहीं रहा करते थे। वहाँ का राजकुमार मर गया। वहाँ के बादशाह ने उस मरे हुए शरीर में जान डालने के लिए कई सन्तों पीरों गुरुओं को बुलवाया। बहुत से सन्त और गुरु वहाँ आए जो यह दावा करते थे कि वे सच्चे सन्त और परमात्मा के भक्त हैं। उन सबने अपने-अपने तरीके आजमाएं। कईयों ने अपने-अपने तरीकों से भक्ति की जिससे वे परमात्मा को खुश कर सकें और मरे हुए राजकुमार के शरीर में फिर से जान आ सके लेकिन कोई भी कामयाब नहीं हुआ।

आखिर में जब शम्स तबरेज वहाँ आए तब बादशाह ने उनसे कहा ऐसा कुछ करो जिससे मेरा पुत्र जीवित हो जाए। जैसा सबने कहा था वैसा ही शम्स तबरेज ने कहा, ''मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि तुम परमात्मा के नाम पर जीवित हो जाओ।'' पर कुछ नहीं हुआ क्योंकि शम्स तबरेज ने भी वही कहा जो दूसरे लोगों ने कहा था; इसमें कोई शक्ति नहीं थी। सब लोग निराश हो गए फिर शम्स तबरेज ने मरे हुए शरीर को हाथ लगाकर कहा, ''अब मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि तुम मेरे नाम पर जीवित हो जाओ।'' जब शम्स तबरेज ने यह कहा तो राजकुमार उठकर खड़ा हो गया।

अब सब लोग हैरान थे कि जब शम्स तबरेज ने परमात्मा के नाम पर प्रार्थना करके राजकुमार को जीवित होने के लिए कहा तो वह जीवित नहीं हुआ। जब अपने नाम पर प्रार्थना करके राजकुमार को जीवित होने के लिए कहा तो वह उठकर खड़ा हो गया। उस समय अपने आपको गुरु सन्त पीर कहलवाने वालों को अपनी पदवी छिन जाने का डर हो गया। वे शम्स तबरेज का विरोध करने लगे।

उन लोगों ने बादशाह से कहा अब तक किसी गुरु या सन्त ने ऐसा जादू नहीं दिखाया और न ही किसी ने यह कहा है कि वह परमात्मा

के बराबर है लेकिन यह आदमी साबित करना चाहता है कि यह परमात्मा से भी बड़ा है जोकि मुस्लिम धर्म के खिलाफ है, इसे सजा मिलनी चाहिए। बादशाह यह भूल गया कि शम्स तबरेज ने उसके राजकुमार के लिए क्या किया है और बादशाह ने शम्स तबरेज की खाल उतारने का हुक्म दे दिया।

सन्त जब यह कहते हैं कि उनमें और परमात्मा में कोई अंतर नहीं तो लोग यकीन नहीं करते बल्कि उन्हें दुख देते हैं। **सभी सन्त एक होते हैं**, परमात्मा और गुरु भी एक ही होते हैं। सन्त हमेशा चुप रहते हैं और अपने शिष्यों को फैसला करने देते हैं कि उनमें और परमात्मा में कोई अंतर नहीं है।

महाराज सावन सिंह जी के नामलेवा सुंदरदास की कहानी सन्तबानी मैगजीन में भी प्रकाशित हुई है। सुंदरदास महाराज सावन का बहुत प्यारा शिष्य था। बहुत दुख सहने के बाद वह मेरे पास बहुत समय तक रहा। जब गुरु कृपाल मेरे घर आए तो आपने सुंदरदास को भजन में बैठने के लिए कहा। सुंदरदास जब भजन से उठा तो उसने अपना अनुभव महाराज कृपाल को बताया, ''एक बार गुरु ने शम्स तबरेज के रूप में जन्म लिया था।''

परमात्मा सदा से एक ही है। जब से सृष्टि की रचना हुई केवल एक परमात्मा ही था वह शरीर बदलता है। सन्त कभी लंबे कद के कभी छोटे कद के; कभी काले रंग के कभी गोरे रंग के होते हैं लेकिन उनके अंदर जो शक्ति काम करती है वह सदा से एक ही है। सन्त हमें अभ्यास में सिखाते हैं कि **सभी सन्त एक होते हैं** वे सिर्फ अपना शरीर बदलते हैं। गुरु अर्जुनदेव जी महाराज कहते हैं:

ज्यों जल में जल आए खटाना, त्यों ज्योति संग मिल ज्योत समाना।

❁❁❁

परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज के मुखारविन्द से अनमोल वचन

प्रेम-विरह

16 पी.एस. आश्रम, राजस्थान

पिछले अंक से जारी.....

सत्य के साथ लगे रहने से और सत्य हो जाने के लिए **प्रेम** की जरूरत है। प्रेम मालिक की अंश होने के कारण रूह का खास गुण है। परमार्थ को समझने और उस पर चलने के लिए सुचज्जी अक्ल या विवेक की जरूरत है। जब सत्य और असत्य का निर्णय हो गया तो बुद्धि-विचार का काम खत्म है।

बुद्धि-विचार पहले हमें परमार्थ को समझने में मददगार होती है लेकिन समझ लेने के बाद उस सत्य में समाना होता है जो निरोल **प्रेम** का काम है फिर भी इंसान सोच-विचार करता रहे तो यह रूकावट का कारण बन जाती हैं। आत्मा पर अंकुश करने के चार पर्दे हैं - चित्त, मन, बुद्धि और अहंकार। ये सारे पर्दे उतर जाएं तो आत्मा का साक्षात्कार होता है। चित्त चितवना छोड़ दे, मन के साथ बुद्धि भी काम करना छोड़ दे तो परमार्थ में आगे कदम चलता है।

उपनिषद कहते हैं कि ज्ञानन्द्रियां, मन और बुद्धि थिर हो जाए तो परमगति प्राप्त होती है। सारी अक्लों को प्रीतम के **प्रेम** पर कुर्बान कर देना चाहिए क्योंकि अक्ल को उसी से आधार मिलता है। अक्ल परछाई की तरह है और हक सतपुरुष सूरज की तरह है, परछाई का सूरज के साथ क्या मुकाबला?

प्रेम और हुस्न

हुस्न नाशवान है लेकिन सच्चा **प्रेम** मौहब्बत या चाह कभी नाश नहीं होती। हुस्न चाहे नाश हो जाए नजाकत न रहे, नाज अंदाज जाते रहे मनमोहनी खूबसूरती आलोप हो जाए पर सच्ची जाति मौहब्बत उस

वक्त तक कायम रहती है जब तक कि मौहब्बत करने वाले का जिस्म कायम रहता है। उसके मर जाने के बाद भी मौहब्बत वैसी ही रहती है क्योंकि यह उसकी रूह में समा चुकी होती है।

सच्ची मौहब्बत और **प्रेम** कभी फनाह नहीं होते, ये रूह के साथ रहते हैं। जिस्मानी हुस्न आज है कल नहीं। युवावस्था और तंदरूस्ती न रहने से हुस्न ढल जाता है पर प्रेम हमेशा रहता है। जिस हुस्न की बुनियाद जिस्म पर है वह बेबुनियाद है। प्रेम रूह का स्वाभाविक गुण है जब प्रेम का जीवन हो तो हुस्न को भी पानी मिलता है और रूहानी यौवन खिल आता है जिसमें रूह झलक देती है। ऐसा हुस्न आलौकिक कशिश रखता है और प्रेम को पैदा करने वाला होता है।

जहाँ आत्मिक रंग के साथ रंगा हुआ हुस्न न हो वहाँ **प्रेम** कहाँ? बुलबुल ताजे और खिले हुए फूलों पर मस्त होती है। कभी दीवार पर उकरे हुए नक्श नगार के फूल बुलबुल को खींच नहीं सकते। मौहब्बत कभी नहीं जा सकती चाहे हड्डियों को सुरमें की तरह बारीक पीसा जाए! जिस तरह संदल को रगड़कर फैंक दें खुशबू कहीं नहीं जाती। **प्रेम** की बुनियाद रूह पर है जो सदा अटल है। हुस्न बेबुनियाद हो सकता है पर प्रेम बेबुनियाद नहीं होता।

जहाँ **प्रेम** है वहाँ जमाल भी अवश्य होता है। चेहरा खिल उठता है। आँखे ठहक आती हैं। महात्माओं के अंदर मालिक का प्रेम ठाठें मारता है। महात्माओ का प्रेम रूह के साथ होता है, जिस्म-जिस्मानियत के साथ नहीं, वे इसको आत्मिक रंग देकर रूहानी रंग में चमका देते हैं।

प्रेम और ज्ञान

प्रेम और ज्ञान में अगर फर्क समझा जाए तो केवल यही है कि ज्ञान भेद को मिटाकर खेल खत्म करना चाहता है। प्रेम भेद को भी अमोलक जानकर उसे कायम रखता हुआ अभेद रहता है। भक्त भगवंत के प्रेम में ऐसा लीन हो जाता है कि सेवा करते हुए भी स्वामी और

सेवक का भेद नहीं रहता। प्रेमी अपने आपको प्रीतम से अलग नहीं देखता। अक्ल इस भेद को नहीं जान सकती क्योंकि यह जिंदगी का भेद है केवल समझने की बात नहीं।

हर आपे ठाकुर सेवक भक्त हर आपे करे कराए।

शम्स तबरेज फरमाते हैं, ''ऐ अजब शम्स तबरेज! मैं अपने आप पर आशिक हो गया हूँ। जब मैंने अपने अंदर झाँका तो खुदा को छोड़कर अपने अंदर कुछ भी नजर नहीं आया।'' दादू साहब फरमाते हैं:

प्रीत जो मेरे पिओं की बैठी पिंजर माहीं।
रोम रोम पिओ पिओ करे दादू दूसर नहीं।

मेरे प्रीतम की प्रीत मेरे पिंजर में बैठ गई तो मेरा रोम-रोम पिओं-पिओं करता है। उसको छोड़कर कोई दिखाई नहीं देता। प्रीतम को **प्रेम** पत्रियां तब लिखनी चाहिए जब वह कहीं परदेश में गया हो। वह तो तन मन और प्राणों में बसता है। कबीर साहब कहते हैं:

प्रीतम पतियां तब लिखूं जो तुम वसो विदेश।
तन में मन में प्राण में वाकूं क्या संदेश।

आम लोग ज्ञान और **प्रेम** को एक समय में रूहानी जिंदगी के लिए जरूरी नहीं समझते। वे अपनी रूचि के अनुसार ज्ञान या प्रेम के मार्ग को चुन लेते हैं। कई लोग कर्म मार्ग को चुनकर दुनिया को सुधारने के यत्न में लग जाते हैं। चाहिए तो यह था कि ज्ञान और प्रेम दोनों में पूर्ण होकर नेक कामों की शक्ल में प्रकट होते।

प्रेम और ज्ञान हमारे अंदर रूह फूँक देते हैं जिसके कारण हमसे नेक काम अपने आप होने शुरू हो जाते हैं। असल में ज्ञान और प्रेम दो मार्ग नहीं हैं; ये दोनों ही अपने आपमें जिंदगी हैं। ये दोनों ही जिंदगी की शान हैं इनके मिलाप में ही सच्ची जिंदगी है। ज्ञान और **प्रेम** एक ही हकीकत के दो पहलू हैं और एक ही पक्षी के दो पंख है। ज्ञान के उदय होने पर हमारे अंदर अपने आप प्रेम का चश्मा फूट निकलता है।

शेष अगले अंक में .....

धन्य अजायब

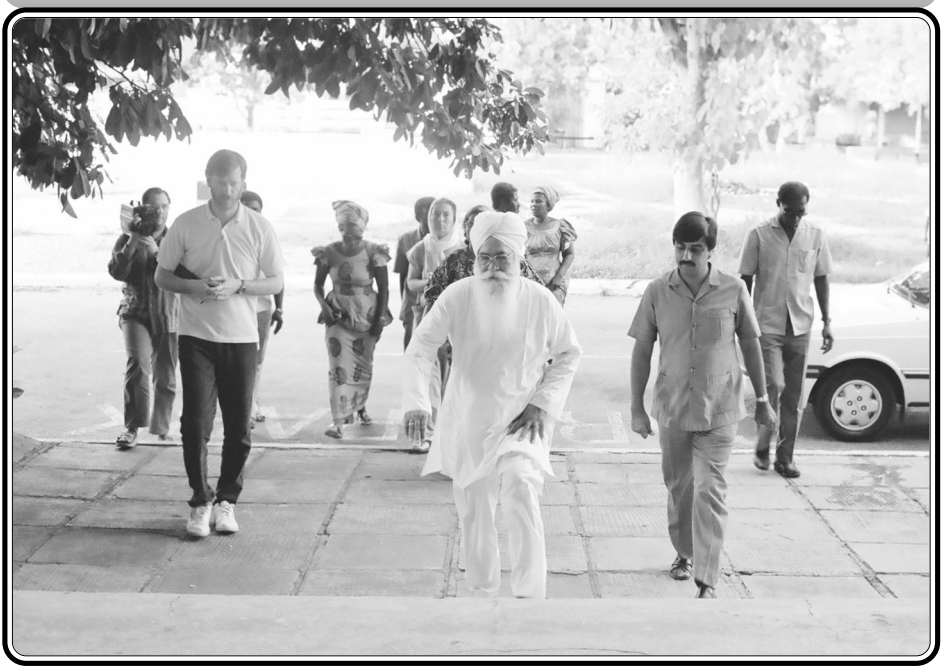

गुरु प्यारी साध संगत जी

परम सन्त अजायब सिंह जी महाराज की दया-मेहर से हर साल की तरह इस साल भी दिल्ली में 14, 15 व 16 मई - 2010 को नीचे लिखे पते पर सतसंग के कार्यक्रम का आयोजन किया जा रहा है।

सभी भाई-बहनों के चरणों में विनम्र निवेदन है कि सतसंग में पहुँचकर लाभ उठाएं।

कम्युनिटी हाल
बेहरा इन्कलेव, पश्चिम विहार
(नजदीक पीरागढ़ी चौक)
नई दिल्ली - 110 087

राकेश कालिया	सोनू सरदाना	सुरेश चोपड़ा	राकेश शर्मा
98101-94555	98107-94597	98182-01999	98102-12138